राजस्थान में वर्ष 2003 से 2023 तक दलित मतदाता की राजनीतिक प्राथमिकताओं में आए परिवर्तनों का अध्ययन

Shodh Siddhi
A Multidisciplinary & Multilingual Double Blind Peer Reviewed International Research Journal
Volume: 02 | Issue: 02 [April to June : 2026], pp. 91-100

ओम प्रकाश
शोधार्थी
राजकीय कला महाविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

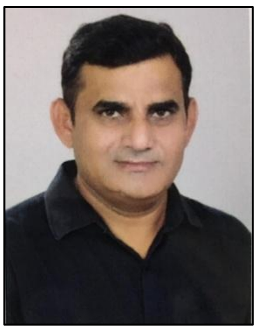

डॉ. गुलाम रसूल खान
(शोध निर्देशक)
राजनीति विज्ञान विभाग
राजकीय कला महाविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

Abstract

प्रस्तुत शोध-पत्र में वर्ष 2003 से 2023 के बीच राजस्थान में दलित मतदाताओं की राजनीतिक प्राथमिकताओं में आए परिवर्तनों का अध्ययन किया गया है। इस अध्ययन में चुनाव परिणामों, सरकारी आँकड़ों तथा उपलब्ध साहित्य के आधार पर यह समझने का प्रयास किया गया है कि समय के साथ दलित मतदाताओं की राजनीतिक सोच और भागीदारी किस प्रकार बदली। अध्ययन अवधि को चार चरणों में बाँटकर प्रत्येक चरण की प्रमुख राजनीतिक प्रवृत्तियों का विश्लेषण किया गया है। शोध-पत्र से यह सामने आया कि दलित मतदाता पहले की तुलना में अधिक जागरूक, सक्रिय और अपने मुद्दों के प्रति सजग हुए हैं। इसके साथ ही दलित राजनीतिक भागीदारी को अधिक मजबूत बनाने के लिए नीतिगत सुझाव और भविष्य के शोध की दिशाएँ भी प्रस्तुत की गई हैं। यह शोध-पत्र राजस्थान में दलित राजनीति के बदलते स्वरूप को समझने के साथ-साथ इस विषय पर आगे होने वाले शोध के लिए एक उपयोगी आधार प्रदान करता है।

मुख्य शब्द: दलित मतदाता, राजस्थान राजनीति, राजनीतिक प्राथमिकताएँ, दलित राजनीति, मतदाता व्यवहार, सामाजिक परिवर्तन, लोकतंत्र, सामाजिक न्याय।

1. प्रस्तावना

लोकतंत्र की मजबूती का पता इस बात से चलता है कि वह समाज के हर वर्ग को कितना समान अवसर देता है। दलित समुदाय लंबे समय तक **सामाजिक भेदभाव, आर्थिक कठिनाइयों और असमान व्यवहार का सामना** करता रहा है।[1] आज़ादी के बाद संविधान, आरक्षण और पंचायती राज जैसी व्यवस्थाओं ने इस समुदाय को राजनीति में भाग लेने का अवसर दिया, लेकिन यह सवाल आज भी बना हुआ है कि क्या इन प्रयासों से उनकी राजनीतिक स्थिति वास्तव में बदली या केवल अधिकार मिलने तक ही बात सीमित रही। इसी कारण यह जानना ज़रूरी है कि आज का दलित मतदाता अपनी **राजनीतिक सोच** किस आधार पर बनाता है और क्या वह पहले की तरह केवल बड़ी राजनीतिक पार्टियों पर निर्भर है।

इसी प्रश्न का उत्तर खोजने के लिए **'राजस्थान'** एक महत्वपूर्ण राज्य के रूप में सामने आता है। उत्तर प्रदेश और पंजाब की तुलना में यहाँ दलित राजनीति का विकास अलग ढंग से हुआ है।[2] **'बहुजन समाज पार्टी** जैसी दलित केंद्रित राजनीति मजबूत रूप नहीं ले सकी। इसके कारण दलित मतदाता का जुड़ाव मुख्य रूप से भाजपा और कांग्रेस जैसी बड़ी पार्टियों के साथ बना रहा। यही स्थिति राजस्थान को अध्ययन के लिए विशेष बनाती है। यहाँ यह समझा जा सकता है कि दलित समुदाय ने अपनी **राजनीतिक सोच** किस प्रकार विकसित की और समय के साथ उसमें क्या परिवर्तन आए।

इसी बदलती राजनीतिक सोच को समझने के लिए **वर्ष 2003 से 2023 का समय** विशेष महत्व रखता है। इस अवधि में राजस्थान में सत्ता परिवर्तन का क्रम बना रहा, शिक्षा और सूचना तकनीक का विस्तार हुआ, दलित समुदाय से नए और शिक्षित युवा नेतृत्व का उभार हुआ तथा सोशल मीडिया ने **राजनीतिक जागरूकता** को नया रूप दिया।[3] इन सभी परिवर्तनों ने मिलकर **दलित मतदाता की प्राथमिकताओं** को धीरे-धीरे प्रभावित किया। यही कारण है कि इस अध्ययन में इस पूरे बदलाव को चार आपस में जुड़े चरणों में समझने का प्रयास किया गया है, जिससे राजस्थान की वर्तमान राजनीति और दलित मतदाता के बदलते दृष्टिकोण को बेहतर ढंग से समझा जा सके।

2. साहित्य समीक्षा

प्रस्तुत शोध से संबंधित साहित्य का अध्ययन करने पर यह स्पष्ट होता है कि दलित राजनीति पर अब तक हुए अध्ययन मुख्य रूप से तीन आधारों पर केंद्रित रहे हैं। इनमें **वैचारिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन, उत्तर भारत की चुनावी राजनीति से जुड़े अध्ययन तथा समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण** से किए गए शोध प्रमुख हैं। इन अध्ययन□□ से दलित राजनीति के विकास, सामाजिक न्याय, राजनीतिक भागीदारी तथा पहचान की राजनीति को समझने में सहायता मिलती है। इसी आधार पर प्रमुख स्रोतों की समीक्षा निम्नलिखित है –

- **"राजस्थान की राजनीति : इतिहास, व्यवस्थाएँ, चुनौतियाँ एवं उभरते आयाम"**, केशव सिंह गुप्ता, जय किशन ओझा एवं गोपाल व्यास **(2025)** द्वारा लिखित यह पुस्तक :

यह पुस्तक राजस्थान की राजनीति के ऐतिहासिक विकास, प्रशासनिक व्यवस्था, सामाजिक संरचना और वर्तमान राजनीतिक चुनौतियों का विस्तृत परिचय देती है। लेखकों ने राज्य की राजनीतिक यात्रा को अलग-अलग समय के संदर्भ में समझाने का प्रयास किया है। प्रस्तुत शोध के लिए यह पुस्तक राजस्थान की राजनीतिक पृष्ठभूमि और उसके विकास को समझने का **महत्वपूर्ण आधार** प्रदान करती है। किन्तु इसमें दलित मतदाता के राजनीतिक व्यवहार, उसकी बदलती प्राथमिकताओं तथा निर्णय लेने की प्रक्रिया का अलग से विस्तृत अध्ययन नहीं किया गया है।

- **"राजस्थान की राजनीति, सामंतवाद से जातिवाद के भंवर में"**, विजय भंडारी **(2023)** द्वारा लिखित यह पुस्तक :

यह पुस्तक राजस्थान की राजनीति में समय के साथ आए बदलावों का अध्ययन प्रस्तुत करती है। लेखक ने बताया है कि राज्य की राजनीति धीरे-धीरे सामंतवादी व्यवस्था से निकलकर जातिगत समीकरणों पर अधिक आधारित होती गई। पुस्तक में विभिन्न सामाजिक समूहों की **राजनीतिक भूमिका और चुनावी बदलावों** पर भी चर्चा की गई है। प्रस्तुत शोध के लिए यह पुस्तक राजस्थान की राजनीतिक पृष्ठभूमि को समझने में उपयोगी है, क्योंकि इससे **राज्य की सामाजिक और राजनीतिक संरचना** का स्पष्ट परिचय मिलता है।

- **"समकालीन भारत में दलित राजनीति"**, सांबैयाह गुंडिमेडा **(2016)** द्वारा लिखित यह पुस्तक :

इस पुस्तक में लेखक ने दलित राजनीति को लगातार बदलने वाली प्रक्रिया के रूप में प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार **राजनीतिक जागरूकता** सामाजिक बदलाव और शिक्षा के साथ विकसित होती है तथा समय के साथ राजनीतिक भागीदारी को प्रभावित करती है। यह पुस्तक प्रस्तुत शोध में दलित राजनीति के बदलते स्वरूप को समझने में उपयोगी है।

- **"द मेकिंग ऑफ द दलित पब्लिक इन नॉर्थ इंडिया"**, बद्री नारायण **(2011)** द्वारा लिखित यह पुस्तक :

इस पुस्तक में दलित समाज की पहचान, लोक संस्कृति, प्रतीकों और सामाजिक स्मृतियों की भूमिका को विस्तार से समझाया गया है। लेखक ने बताया है कि दलित समुदाय की राजनीतिक पहचान केवल चुनावी राजनीति से नहीं बनती, अपितु उसकी **सामाजिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि** भी इसमें महत्वपूर्ण होती है। यह पुस्तक प्रस्तुत शोध में पहचान की राजनीति को

समझने का आधार प्रदान करती है। हालाँकि इसका अध्ययन भी मुख्य रूप से उत्तर प्रदेश तक सीमित है, इसलिए राजस्थान की परिस्थितियों का विस्तृत विश्लेषण इसमें नहीं मिलता।

- **"ब्लॉक्ड बाय कास्ट : इकोनॉमिक डिस्क्रिमिनेशन इन मॉडर्न इंडिया"**, सुखदेव थोराट एवं कैथरीन न्यूमैन (संपा.) **(2010)** द्वारा संपादित यह पुस्तक :

इस पुस्तक में जातिगत भेदभाव को आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से समझाया गया है। लेखक बताते हैं कि सामाजिक न्याय का संबंध **रोजगार, शिक्षा और निजी क्षेत्र में समान अवसरों** से भी जुड़ा हुआ है। प्रस्तुत शोध के लिए यह पुस्तक इसलिए उपयोगी है क्योंकि इससे दलित मतदाता की बदलती प्राथमिकताओं और विकास से जुड़े मुद्दों को समझने में सहायता मिलती है। हालाँकि पुस्तक **'राजस्थान'** के विशेष संदर्भ पर केंद्रित नहीं है।

- **"राइटिंग कास्ट राइटिंग जेंडर : रीडिंग्स फ्रॉम दलित विमेन्स टेस्टिमोनियोज़"**, शर्मिला रेगे **(2006)** द्वारा लिखित यह पुस्तक :

इस पुस्तक में दलित महिलाओं के अनुभवों के माध्यम से **दलित समाज की सामाजिक और राजनीतिक स्थिति** को समझाया गया है। लेखिका ने स्पष्ट किया है कि दलित राजनीति को एक समान मानना उचित नहीं है, क्योंकि समुदाय के भीतर महिलाओं, पुरुषों और विभिन्न सामाजिक समूहों के अनुभव अलग-अलग हैं। प्रस्तुत शोध के लिए यह पुस्तक दलित समाज की आंतरिक विविधता को समझने में उपयोगी है।

- **"इंडियाज साइलेंट रिवोल्यूशन : द राइज़ ऑफ द लोअर कास्ट्स इन नॉर्थ इंडिया"**, क्रिस्टोफ जाफरलोट **(2003)** द्वारा लिखित यह पुस्तक :

यह पुस्तक उत्तर भारत में पिछड़ी और दलित जातियों के राजनीतिक उभार का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत करती है। लेखक ने बताया है कि सामाजिक न्याय की राजनीति ने धीरे-धीरे इन समुदायों को **राजनीतिक रूप** से मजबूत बनाया और उनकी भागीदारी बढ़ी। पुस्तक में **'उत्तर प्रदेश'** और **'बिहार'** के राजनीतिक अनुभवों को आधार बनाकर इस बदलाव को समझाया गया है। प्रस्तुत शोध के लिए यह पुस्तक दलित राजनीति की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और उसके विकास को समझने में उपयोगी है। हालाँकि इसकी प्रमुख सीमा यह है कि इसका अध्ययन मुख्य रूप से उत्तर प्रदेश और बिहार तक सीमित है, इसलिए **'राजस्थान'** जैसे अलग सामाजिक और राजनीतिक स्वरूप वाले राज्य की स्थिति को यह पूरी तरह स्पष्ट नहीं कर पाती।

- **"दलित एसेर्शन एंड द अनफिनिश्ड डेमोक्रेटिक रिवोल्यूशन : द बहुजन समाज पार्टी इन उत्तर प्रदेश"**, सुधा पाई **(2002)** द्वारा लिखित यह पुस्तक :

इस पुस्तक में बहुजन समाज पार्टी के विकास और दलित राजनीति के उभार का विश्लेषण किया गया है। लेखिका ने बताया है कि दलित राजनीति की सफलता हर **राज्य की सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों** पर निर्भर करती है। पुस्तक यह भी स्पष्ट करती है कि संगठित राजनीतिक नेतृत्व के बिना दलित राजनीति को स्थायी सफलता मिलना कठिन होता है। प्रस्तुत शोध के लिए यह पुस्तक इसलिए उपयोगी है क्योंकि इससे यह समझने में सहायता मिलती है कि **'राजस्थान'** में मजबूत दलित राजनीतिक संगठन के अभाव ने दलित राजनीति को किस प्रकार प्रभावित किया। फिर भी इसका अध्ययन मुख्य रूप से उत्तर प्रदेश तक सीमित है।

उपरोक्त साहित्य समीक्षा से स्पष्ट होता है कि दलित राजनीति पर पर्याप्त अध्ययन उपलब्ध हैं, किन्तु अधिकांश शोध उत्तर भारत के कुछ राज्यों तक ही सीमित हैं। राजस्थान में **वर्ष 2003 से 2023 के बीच** दलित मतदाता की बदलती राजनीतिक प्राथमिकताओं, डिजिटल प्रभाव और नए नेतृत्व के उभार पर समग्र अध्ययन का अभाव दिखाई देता है।[4]

3. शोध समस्या एवं शोध का औचित्य

राजस्थान में दलित मतदाताओं की राजनीतिक प्राथमिकताओं में समय के साथ महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं, किन्तु इन परिवर्तनों का समग्र अध्ययन अभी तक पर्याप्त रूप से नहीं किया गया है। विशेष रूप से **वर्ष 2003 से 2023 के बीच** सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक, राजनीतिक तथा संचार माध्यमों में आए बदलावों ने दलित मतदाताओं के निर्णयों को किस प्रकार प्रभावित

किया।[5] इस पर **स्पष्ट और व्यवस्थित अध्ययन का अभाव** दिखाई देता है। यही स्थिति इस विषय के गहन अध्ययन की आवश्यकता को सामने लाती है और प्रस्तुत शोध के औचित्य को स्पष्ट करती है –

1. प्रस्तुत अध्ययन राजस्थान में वर्ष 2003 से 2023 के बीच दलित मतदाताओं की राजनीतिक प्राथमिकताओं में आए **परिवर्तनों का व्यवस्थित विश्लेषण** प्रस्तुत करेगा।
2. यह शोध दलित मतदाताओं के राजनीतिक व्यवहार को प्रभावित करने वाले **सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक तथा राजनीतिक कारकों की पहचान** करने में सहायक होगा।
3. अध्ययन से यह समझने में सहायता मिलेगी कि राज्य की प्रमुख राजनीतिक पार्टियों की नीतियों और चुनावी रणनीतियों का **दलित मतदाताओं पर किस प्रकार प्रभाव पड़ा।**
4. यह शोध राजस्थान के संदर्भ में उपलब्ध साहित्य की कमी को आंशिक रूप से पूरा करेगा तथा भविष्य में इस विषय पर होने वाले अनुसंधानों के लिए **उपयोगी आधार** प्रदान करेगा।
5. अध्ययन के निष्कर्ष नीति-निर्माताओं, शोधकर्ताओं तथा राजनीति के विद्यार्थियों के लिए भी उपयोगी सिद्ध होंगे, क्योंकि इनके माध्यम से राजस्थान में **दलित राजनीति के बदलते स्वरूप** को बेहतर ढंग से समझा जा सकेगा।

उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट है कि प्रस्तुत शोध उन **सामाजिक और राजनीतिक कारणों** को भी समझने का प्रयास करेगा, जिन्होंने इन परिवर्तनों को प्रभावित किया। इस दृष्टि से यह अध्ययन **राजस्थान की समकालीन राजनीति** को समझने में एक **उपयोगी योगदान** प्रदान करेगा।

4. शोध के उद्देश्य

राजस्थान में वर्ष 2003 से 2023 के बीच दलित मतदाताओं की **राजनीतिक सोच, भागीदारी और मतदान व्यवहार** में कई स्तरों पर परिवर्तन दिखाई देते हैं। इन परिवर्तनों को केवल चुनावी परिणामों के आधार पर समझना पर्याप्त नहीं है, क्योंकि इनके पीछे **सामाजिक स्थिति, शिक्षा, आर्थिक बदलाव, राजनीतिक जागरूकता, नए नेतृत्व और संचार माध्यमों** की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही है।[6] इसी व्यापक संदर्भ को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किए गए हैं–

1. राजस्थान में वर्ष 2003 से 2023 के बीच दलित मतदाताओं की राजनीतिक प्राथमिकताओं में आए **परिवर्तनों का चार चरणों में अध्ययन करना।**
2. इस अवधि में **दलित समुदाय की राजनीतिक भागीदारी, राजनीतिक जागरूकता और मतदान के तरीके** में आए बदलावों को समझना।
3. शिक्षित, युवा और डिजिटल माध्यमों से जुड़े नए दलित नेतृत्व के उभार तथा उसके **राजनीतिक प्रभाव का अध्ययन करना।**
4. भारतीय जनता पार्टी, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और बहुजन समाज पार्टी के साथ दलित मतदाताओं एवं दलित नेतृत्व के **बदलते संबंधों का विश्लेषण करना।**
5. दलित मतदाताओं की राजनीतिक सोच और चुनावी निर्णयों को प्रभावित करने वाले **सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक और राजनीतिक कारणों की पहचान करना।**
6. दलित राजनीति के सामने मौजूद **संगठनात्मक, नेतृत्व संबंधी, सामाजिक और राजनीतिक चुनौतियों को समझना तथा उनके प्रभाव का अध्ययन करना।**

इन उद्देश्यों के माध्यम से दलित मतदाताओं की बदलती राजनीतिक प्राथमिकताओं को केवल मतदान तक सीमित न रखकर उसके **व्यापक सामाजिक और राजनीतिक संदर्भ** में समझने का प्रयास किया जाएगा। इससे राजस्थान में दलित राजनीति के विकास, उसकी वर्तमान स्थिति और उसके सामने मौजूद प्रमुख चुनौतियों का अधिक स्पष्ट चित्र सामने आ सकेगा।

5. शोध प्रविधि एवं विश्लेषणात्मक ढाँचा

प्रस्तुत अध्ययन **'गुणात्मक'** और **'व्याख्यात्मक'** शोध प्रविधि पर आधारित है, जिसमें राजस्थान में वर्ष 2003 से 2023 के बीच दलित मतदाताओं की राजनीतिक प्राथमिकताओं में आए परिवर्तनों का क्रमबद्ध अध्ययन किया गया है। शोध-पत्र के लिए मुख्य रूप से **द्वितीयक स्रोतों का उपयोग** किया गया है, जिनमें भारत निर्वाचन आयोग के विधानसभा चुनाव परिणाम, भारत सरकार की जनगणना रिपोर्ट, प्रकाशित पुस्तकें, शोध-पत्र, सरकारी दस्तावेज तथा समाचार-पत्रों और पत्रिकाओं की सामग्री शामिल है। अध्ययन को अधिक स्पष्ट बनाने के लिए **उपलब्ध सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक संकेतकों** का भी संदर्भ लिया गया है, जिनका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित तालिका में प्रस्तुत है —

तालिका 01 : दलित समाज के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक संकेतक

संकेतक	**आँकड़े**
साक्षरता दर	66%
गरीबी रेखा के नीचे जनसंख्या	31%
नियमित रोजगार में भागीदारी	18%
उच्च शिक्षा में भागीदारी	14%
राजनीतिक प्रतिनिधित्व का औसत	17.5%

[**स्रोत:** तालिका शोधार्थी द्वारा तैयार की गई है।]

उपरोक्त तालिका में प्रस्तुत आँकड़ों को अधिक **स्पष्ट और तुलनात्मक रूप** से समझाने के लिए उन्हें **पाई चार्ट के रूप** में भी प्रदर्शित किया गया है —

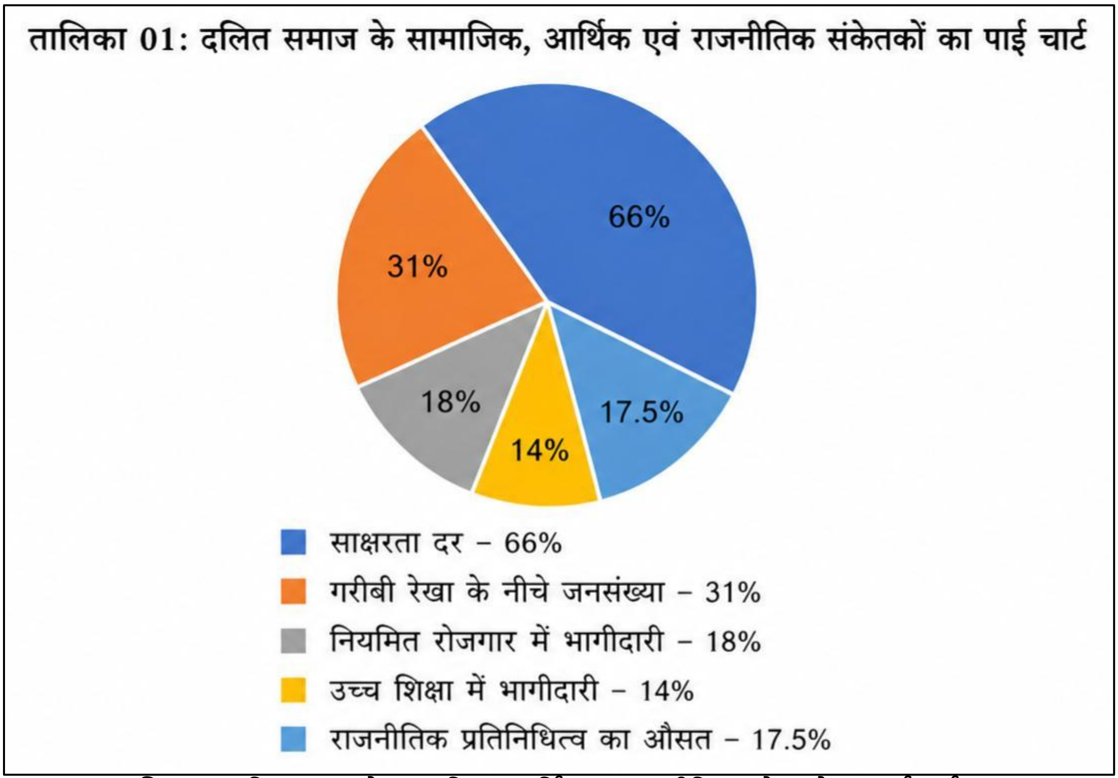

चित्र 01: दलित समाज के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक संकेतकों का पाई चार्ट

[**स्रोत:** शोधार्थी द्वारा तैयार किया गया है।]

उपरोक्त संकेतक अध्ययन की पृष्ठभूमि को समझने में सहायक हैं तथा दलित समाज की सामाजिक और आर्थिक स्थिति का सामान्य चित्र प्रस्तुत करते हैं। इन्हीं स्रोतों के आधार पर **'गुणात्मक विषयवस्तु विश्लेषण'** तथा **'तुलनात्मक**

विश्लेषण' की पद्धति अपनाई गई है। विश्लेषण को अधिक व्यवस्थित बनाने के लिए अध्ययन अवधि को चार चरणों — **वर्ष 2003–2008, वर्ष 2008–2013, वर्ष 2013–2018 और वर्ष 2018–2023** — में विभाजित किया गया है, जिससे प्रत्येक अवधि में दलित मतदाताओं की राजनीतिक प्राथमिकताओं में आए परिवर्तनों को क्रमवार समझा जा सके। अध्ययन क□ एक प्रमुख सीमा यह है कि यह प्राथमिक सर्वेक्षण या साक्षात्कार पर आधारित न होकर द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है, फिर भी विभिन्न स्रोतों के तुलनात्मक अध्ययन के माध्यम से निष्कर्षों को अधिक **विश्वसनीय और संतुलित** बनाने का प्रयास किया गया है।

6. सैद्धांतिक ढाँचा : सामाजिक न्याय, पहचान और सशक्तिकरण का त्रिकोण

प्रस्तुत अध्ययन का सैद्धांतिक आधार तीन परस्पर जुड़े हुए पक्षों पर निर्मित है, जिनमें **वैचारिक विरासत, सामाजिक न्याय और पहचान की राजनीति** प्रमुख हैं। वैचारिक विरासत के अंतर्गत **'ज्योतिराव फुले'**, **'डॉ. भीमराव अम्बेडकर'** और **'कांशीराम'** के विचारों को आधार बनाया गया है, जिन्होंने दलित समाज में अधिकार चेतना, संगठन और राजनीतिक भागीदारी पर विशेष बल दिया।[7] सामाजिक न्याय का आधार भारतीय संविधान के उन प्रावधानों में निहित है, जो **समान अवसर, सम्मान और संसाधनों** में भागीदारी सुनिश्चित करने की बात करते हैं। वहीं पहचान की राजनीति दलित समुदाय में **आत्मसम्मान, सामाजिक जागरूकता और अपनी राजनीतिक पहचान** को मजबूत करने का माध्यम बनती है, किन्तु इसका वास्तविक महत्व तभी है जब यह शिक्षा, रोजगार और नीति निर्माण से भी जुड़ सके।[8] इन तीनों पक्षों को साथ लेकर प्रस्तुत शोध-पत्र राजस्थान में **वर्ष 2003 से 2023 के बीच** दलित मतदाताओं की राजनीतिक प्राथमिकताओं और उनमें आए परिवर्तनों का क्रमबद्ध विश्लेषण करता है तथा यही ढाँचा आगे प्रस्तुत विश्लेषण का आधार बनता है।

7. विश्लेषण : राजस्थान में दलित मतदाता प्राथमिकताओं का चार चरणीय रूपांतरण

राजस्थान में वर्ष 2003 से 2023 के बीच दलित **मतदाताओं की राजनीतिक प्राथमिकताओं** में आए परिवर्तनों को समझने के लिए इस अध्ययन में चार चरणों का विश्लेषणात्मक ढाँचा अपनाया गया है। इस ढाँचे के माध्यम से प्रत्येक चुनावी अवधि में **प्रतिनिधित्व, राजनीतिक भागीदारी तथा बदलती राजनीतिक प्रवृत्तियों** का क्रमवार अध्ययन किया गया है।[9] इससे यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि दलित मतदाताओं की राजनीतिक सोच समय के साथ किस प्रकार विकसित हुई और किन परिस्थितिय□□ ने उसे प्रभावित किया। इस परिवर्तन को अधिक स्पष्ट रूप में समझने के लिए राजस्थान विधानसभा में दलित प्रतिनिधित्व से संबंधित आँकड़े निम्नलिखित तालिका में प्रस्तुत किए गए हैं —

तालिका 02: वर्ष 2003 से 2023 तक राजस्थान विधानसभा में दलित प्रतिनिधि

वर्ष	दलित प्रतिनिधित्व (सीटें)	कुल 200 सीटों में प्रतिशत	प्रमुख प्रवृत्ति
2003	33	**16.5%**	सीमित प्रभाव तथा परम्परागत राजनीति
2008	34	**17.0%**	भागीदारी में क्रमिक वृद्धि
2013	35	**17.5%**	नेतृत्व का विस्तार
2018	34	**17.0%**	प्रतिस्पर्धा तथा पुनर्संतुलन
2023	36	**18.0%**	प्रभावी राजनीतिक उपस्थिति

[**स्रोत:** तालिका शोधार्थी द्वारा तैयार की गई है।]

उपरोक्त तालिका में प्रस्तुत आँकड़ों को **अधिक स्पष्ट, तुलनात्मक तथा दृश्य रूप** में समझने के लिए उन्हें निम्नलिखित बार ग्राफ के माध्यम से प्रदर्शित किया गया है —

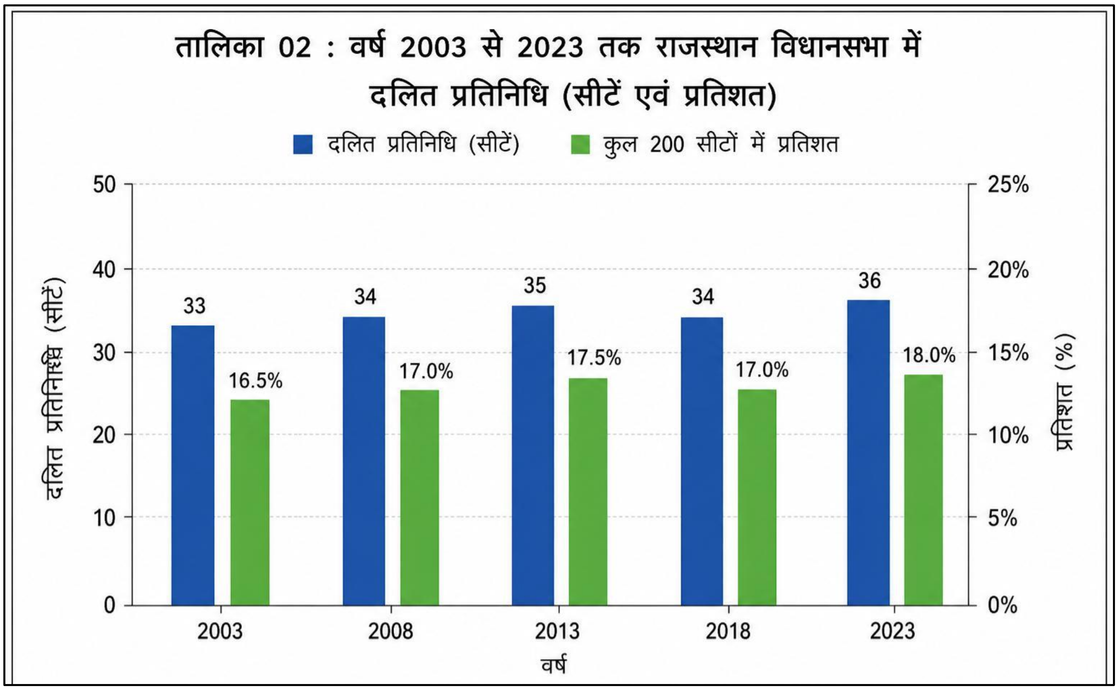

चित्र 02: वर्ष 2003 से 2023 तक राजस्थान विधानसभा में दलित प्रतिनिधि (सीटें एवं प्रतिशत)
[**स्रोत:** शोधार्थी द्वारा तैयार किया गया है।]

7.1 प्रथम चरण : वर्ष 2003 से 2008, परंपरागत निष्ठा का दौर

वर्ष 2003 से 2008 के दौरान **'राजस्थान'** में दलित मतदाताओं का राजनीतिक व्यवहार मुख्यतः परंपरागत राजनीतिक निष्ठा और स्थापित दलों के प्रति विश्वास पर आधारित रहा। इस अवधि में मतदान का निर्णय **स्थानीय नेतृत्व, सामाजिक संबंधों और आरक्षित निर्वाचन क्षेत्रों की राजनीतिक परिस्थितियों** से अधिक प्रभावित दिखाई देता है। विधानसभा में दलित प्रतिनिधियों की संख्या **33** रही, जो कुल 200 सीटों का **16.5** प्रतिशत थी। इससे स्पष्ट होता है कि प्रतिनिधित्व तो मौजूद था, लेकिन उसका राजनीतिक प्रभाव अपेक्षाकृत सीमित रहा। इस समय दलित मतदाताओं की स्वतंत्र **राजनीतिक पहचान और प्रभावी संगठनात्मक शक्ति** मजबूत रूप में विकसित नहीं हो सकी, जिसके कारण उनकी राजनीतिक भूमिका मुख्यतः बड़े दलों के समर्थन तक ही सीमित रही और उनके मुद्दों को अपेक्षित प्राथमिकता नहीं मिल सकी।[10]

7.2 द्वितीय चरण : वर्ष 2008 से 2013, स्वायत्त दावेदारी का उदय

वर्ष 2008 से 2013 के दौरान **'राजस्थान'** की दलित राजनीति में पहले की तुलना में महत्वपूर्ण परिवर्तन दिखाई देने लगे। इस अवधि में **'बहुजन समाज पार्टी'** जैसे दलित केंद्रित राजनीतिक दलों की सक्रियता बढ़ी, जिससे प्रमुख राजनीतिक दलों को भी दलित मतदाताओं के प्रति अधिक गंभीरता से ध्यान देना पड़ा।[11] विधानसभ□ में दलित प्रतिनिधियों की संख्या बढ़कर **34** हो गई, जो कुल सीटों का **17 प्रतिशत** थी। इसी समय पंचायती राज संस्थाओं में आरक्षण के प्रभाव से स्थानीय स्तर पर नए दलित नेतृत्व का विकास हुआ, जिसने आगे चलकर राज्य की राजनीति में भी अपनी भागीदारी दर्ज करानी शुरू की। इस कारण दलित मतदाताओं की राजनीतिक भूमिका पहले की अपेक्षा **अधिक प्रभावी** दिखाई देने लगी, यद्यपि मजबूत और स्थायी संगठन के अभाव में यह परिवर्तन **स्वतंत्र राजनीतिक शक्ति के रूप** में पूरी तरह स्थापित नहीं हो सका।[12]

7.3 तृतीय चरण : वर्ष 2013 से 2018, प्रतिस्पर्धी सौदेबाजी एवं पुनर्संतुलन

वर्ष 2013 से 2018 के दौरान दलित मतदाताओं की राजनीतिक भूमिका पहले की तुलना में अधिक सक्रिय और प्रभावशाली दिखाई देने लगी। वर्ष 2013 में विधानसभा में दलित प्रतिनिधियों की संख्या बढ़कर **35** हुई, जो अध्ययन अवधि का

सर्वाधिक स्तर था, जबकि वर्ष 2018 में यह घटकर **34** रह गई। यह परिवर्तन बताता है कि दलित प्रतिनिधित्व समय-समय पर राजनीतिक परिस्थितियों के अनुसार उसमें उतार-चढ़ाव आता रहा। इस अवधि में दलित मतदाताओं ने केवल दल या परंपरागत निष्ठा के आधार पर मतदान करने के बजाय **उम्मीदवार की विश्वसनीयता, नेतृत्व क्षमता, स्थानीय स्वीकार्यता और चुनावी वादों** को भी महत्व देना शुरू किया।[13] इससे स्पष्ट होता है कि दलित मतदाता पहले की अपेक्षा अधिक **जागरूक और विवेकपूर्ण निर्णय लेने वाला वर्ग** बन गया, जिसने राजनीतिक दलों से केवल समर्थन नहीं बल्कि जवाबदेही और ठोस कार्य की अपेक्षा भी रखनी शुरू कर दी।

7.4 चतुर्थ चरण : वर्ष 2018 से 2023, डिजिटल विकासोन्मुख नागरिकता

वर्ष 2018 से 2023 का दौर दलित राजनीति में नए बदलावों का संकेत देता है। इस अवधि में राजस्थान विधानसभा में दलित प्रतिनिधियों की संख्या बढ़कर **36** हो गई, जो कुल सीटों का **18 प्रतिशत** थी और अध्ययन अवधि का सबसे अधिक स्तर रहा। इस समय शिक्षित युवा नेतृत्व, सोशल मीडिया और अन्य डिजिटल माध्यमों ने दलित मतदाताओं की राजनीतिक सोच को नई दिशा दी। अब उनकी प्राथमिकताएँ **शिक्षा, रोजगार, सामाजिक सुरक्षा, आर्थिक अवसर और सम्मानजनक जीवन** जैसे मुद्दे भी महत्वपूर्ण बन गए। साथ ही दलित महिलाओं, युवाओं और विभिन्न उपजातियों की अलग-अलग आवश्यकताओं और अनुभवों को भी राजनीतिक चर्चा में अधिक स्थान मिलने लगा।[14] इससे स्पष्ट होता है कि इस अवधि में दलित राजनीति अधिक व्यापक, जागरूक और सहभागी स्वरूप की ओर बढ़ी।

8. निर्धारक कारकों का समालोचनात्मक विश्लेषण

चारों चरणों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि दलित मतदाताओं की राजनीतिक प्राथमिकताओं में आया परिवर्तन अनेक **सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक कारकों** के संयुक्त प्रभाव से विकसित हुआ। शिक्षा के प्रसार ने मतदाताओं में राजनीतिक जागरूकता और विवेकपूर्ण निर्णय लेने की क्षमता को बढ़ाया।[15] पंचायती राज संस्थाओं में आरक्षण के प्रभावी क्रियान्वयन से स्थानीय स्तर पर नए नेतृत्व का विकास हुआ, जिसने राज्य की राजनीति में भी अपनी भूमिका निभाई। इसी प्रकार **डिजिटल माध्यमों और सोशल मीडिया** ने राजनीतिक संवाद और सहभागिता को अधिक सरल एवं व्यापक बनाया। दूसरी ओर प्रमुख राजनीतिक दलों द्वारा **दलित हितों और कल्याणकारी योजनाओं** को चुनावी एजेंडे में स्थान दिए जाने से उनकी राजनीतिक महत्ता बढ़ी। यह प्रश्न अभी भी बना हुआ है कि यह प्रक्रिया वास्तविक नीतिगत भागीदारी में कितनी परिवर्तित हो सकी। इसके साथ ही **शहरीकरण, शिक्षा और आर्थिक विविधता** ने दलित समुदाय के भीतर नए सामाजिक एवं वर्गीय अंतर उत्पन्न किए, जिनका प्रभाव मतदान व्यवहार पर भी दिखाई दिया।[16] इसलिए यह कहा जा सकता है कि इन सभी कारकों के संयुक्त प्रभाव ने ही दलित मतदाताओं की राजनीतिक प्राथमिकताओं में समय के साथ **व्यापक परिवर्तन** उत्पन्न किया।

9. आंतरिक विविधता : अंतर्संबंधता और दलित राजनीति की सीमाएँ

इस शोध-पत्र से स्पष्ट होता है कि दलित मतदाताओं को एक समान सामाजिक और राजनीतिक समूह के रूप में नहीं देखा जा सकता। दलित समुदाय के भीतर **जाति, वर्ग, लिंग, शिक्षा तथा ग्रामीण और शहरी पृष्ठभूमि** के आधार पर अनेक प्रकार की विविधताएँ मौजूद हैं, जिनका प्रभाव उनकी राजनीतिक प्राथमिकताओं और भागीदारी पर भी पड़ता है। विशेष रूप से दलित महिलाओं के अनुभव यह दर्शाते हैं कि **सामाजिक और आर्थिक असमानताएँ** एक-दूसरे से जुड़कर उनके राजनीतिक अवसरों को प्रभावित करती हैं। इसके साथ ही **उपजातीय विभाजन, नेतृत्व की प्रतिस्पर्धा तथा ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों की भिन्न परिस्थितियाँ** भी दलित राजनीति की एकता के सामने महत्वपूर्ण चुनौतियाँ प्रस्तुत करती हैं। इसलिए केवल चुनावी प्रतिनिधित्व को दलित सशक्तिकरण का आधार मानना पर्याप्त नहीं है। इन परिस्थितियों से स्पष्ट होता है कि दलित राजनीति एक **गतिशील सामाजिक-राजनीतिक प्रक्रिया** है, जो समय, परिस्थितियों और समुदाय के भीतर मौजूद विविधताओं के अनुसार निरंतर परिवर्तनशील बनी रहती है।

10. चुनौतियाँ एवं अध्ययन की सीमाएँ

दलित राजनीतिक सशक्तिकरण की प्रक्रिया में अभी भी अनेक चुनौतियाँ बनी हुई हैं। कई बार राजनीतिक दल दलित मतदाताओं को केवल एक निश्चित वोट बैंक के रूप में देखते हैं, जिससे उनके **वास्तविक सामाजिक और राजनीतिक मुद्दों**

को अपेक्षित महत्व नहीं मिल पाता। इसके अतिरिक्त सीमित संसाधन, नेतृत्व का कुछ व्यक्तियों तक केंद्रित रहना तथा प्रभावी संगठनात्मक ढाँचे का अभाव भी इस प्रक्रिया को प्रभावित करता है। डिजिटल माध्यमों ने **राजनीतिक जागरूकता** बढ़ाने के साथ-साथ भ्रामक सूचनाओं और सामाजिक तनाव जैसी नई चुनौतियाँ भी उत्पन्न की हैं। इस शोध-पत्र की भी कुछ सीमाएँ हैं। यह मुख्यतः द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है तथा इसका क्षेत्र केवल राजस्थान और अध्ययन अवधि **वर्ष 2003 से 2023** तक सीमित है। इसलिए इसके निष्कर्षों को अन्य राज्यों या भिन्न समयावधियों पर लागू करते समय सावधानी अपेक्षित है। भविष्य में **प्राथमिक आँकड़ों, क्षेत्रीय सर्वेक्षणों तथा साक्षात्कारों पर आधारित अध्ययन** इन सीमाओं को कम करने और विषय क□ अधिक व्यापक समझ विकसित करने में सहायक हो सकते हैं।

11. निष्कर्ष एवं सैद्धांतिक योगदान

इस शोध-पत्र के निष्कर्ष स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि वर्ष 2003 से 2023 के बीच राजस्थान में दलित मतदाताओं की राजनीतिक प्राथमिकताओं में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ है। इसलिए अध्ययन के परिणाम शून्य परिकल्पना को अस्वीकार करते हुए वैकल्पिक परिकल्पना का समर्थन करते हैं। शोध-पत्र से यह भी स्पष्ट हुआ कि यह परिवर्तन **विभिन्न सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक परिस्थितियों के प्रभाव** से क्रमिक रूप से विकसित हुआ। प्रस्तुत चार-चरणीय विश्लेषणात्मक ढाँचा इस परिवर्तन को परंपरागत राजनीतिक निष्ठा से **स्वायत्त दावेदारी, प्रतिस्पर्धी राजनीतिक सहभागिता** और अंततः डिजिटल तथा विकासोन्मुख राजनीतिक दृष्टिकोण तक की यात्रा के रूप में समझने का अवसर प्रदान करता है। यह ढाँचा उन राज्यों के अध्ययन में भी उपयोगी हो सकत□ है जहाँ दलित राजनीति का स्वरूप अलग परिस्थितियों में विकसित हुआ है। समग्र रूप से यह कहा जा सकता है कि दलित मतदाता अब **अधिक जागरूक, सक्रिय और मुद्दा-आधारित राजनीतिक भागीदारी की ओर** अग्रसर हुआ है, यद्यपि आंतरिक विविधता, संगठनात्मक सीमाएँ और प्रतिनिधित्व से जुड़ी चुनौतियाँ अभी भी इस प्रक्रिया को प्रभावित करती हैं।

12. नीतिगत सुझाव एवं भविष्य के शोध हेतु दिशाएँ

इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि दलित मतदाताओं की राजनीतिक प्राथमिकताओं में आए परिवर्तन को ध्यान में रखते हुए नीतिगत स्तर पर कुछ ठोस प्रयास किए जाने आवश्यक हैं। साथ ही इस विषय पर भविष्य में **अधिक व्यापक और गहन शोध** की भी आवश्यकता है, जिससे प्राप्त निष्कर्षों को और अधिक प्रमाणिक बनाया जा सके। इसी दृष्टि से निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए जा रहे हैं —

1. **दलित समुदाय की आंतरिक विविधता को ध्यान में रखकर नीतियों का निर्माण किया जाए**, ताकि क्षेत्र, वर्ग, लिंग, आयु तथा उपजातीय समूहों की अलग-अलग आवश्यकताओं को उचित स्थान मिल सके।
2. **दलित नेतृत्व के संगठनात्मक विकास को प्रोत्साहित किया जाए**, जिससे स्थानीय स्तर से राज्य स्तर तक सक्षम, प्रशिक्षित और प्रभावी नेतृत्व विकसित हो सके।
3. **शिक्षा, कौशल विकास और रोजगार से संबंधित योजनाओं को अधिक प्रभावी बनाया जाए**, ताकि राजनीतिक सशक्तिकरण के साथ सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण भी सुनिश्चित हो सके।
4. **डिजिटल साक्षरता तथा सुरक्षित डिजिटल वातावरण को बढ़ावा दिया जाए**, जिससे दलित समुदाय सही सूचना तक पहुँच सके और भ्रामक जानकारी तथा ऑनलाइन भेदभाव से स्वयं को सुरक्षित रख सके।
5. **राजनीतिक दलों द्वारा दलित समुदाय की वास्तविक भागीदारी सुनिश्चित की जाए**, ताकि प्रतिनिधित्व केवल चुनाव तक सीमित न रहकर नीति-निर्माण और निर्णय प्रक्रिया में भी दिखाई दे।
6. **भविष्य के शोध में प्राथमिक आँकड़ों, क्षेत्रीय सर्वेक्षणों और गहन साक्षात्कारों का अधिक उपयोग किया जाए**, साथ ही राजस्थान के विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों का तुलनात्मक अध्ययन कर इस विषय की अधिक व्यापक समझ विकसित की जाए।

उपरोक्त सुझावों से स्पष्ट होता है कि दलित राजनीतिक सशक्तिकरण को केवल चुनावी प्रतिनिधित्व तक सीमित न रखकर **सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक तथा संस्थागत** स्तर पर भी सुदृढ़ करने की आवश्यकता है। यदि इन सुझावों को प्रभावी

रूप से लागू किया जाता है, तो दलित समुदाय की लोकतांत्रिक भागीदारी अधिक **सार्थक, समावेशी और स्थायी** बन सकेगी तथा भविष्य के शोध इस विषय की समझ को अधिक समृद्ध करेंगे।

संदर्भ सूची

1. जाफरलोट, क्रिस्टोफ. (2003). *"इंडियाज साइलेंट रिवोल्यूशन : द राइज़ ऑफ द लोअर कास्ट्स इन नॉर्थ इंडिया"*. परमानेंट ब्लैक. पृष्ठ संख्या — 423–431.
2. पाई, सुधा. (2002). *"दलित एसेर्शन एंड द अनफिनिश्ड डेमोक्रेटिक रिवोल्यूशन : द बहुजन समाज पार्टी इन उत्तर प्रदेश"*. सेज पब्लिकेशन्स. पृष्ठ संख्या — 52–61 एवं 118–126.
3. नारायण, बद्री. (2011). *"द मेकिंग ऑफ द दलित पब्लिक इन नॉर्थ इंडिया : उत्तर प्रदेश, 1950 से वर्तमान तक"*. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस. पृष्ठ संख्या — 188–196.
4. थोराट, सुखदेव., एवं न्यूमैन, कैथरीन एस. (संपा.). (2010). *"ब्लॉक्ड बाय कास्ट : इकोनॉमिक डिस्क्रिमिनेशन इन मॉडर्न इंडिया"*. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस. पृष्ठ संख्या — 213–221.
5. रेगे, शर्मिला. (2006). *"राइटिंग कास्ट राइटिंग जेंडर : रीडिंग्स फ्रॉम दलित विमेन्स टेस्टिमोनियोज़"*. जुबान. पृष्ठ संख्या — 1–12.
6. गुंडिमेडा, सांबैयाह. (2016). *"समकालीन भारत में दलित राजनीति"*. राउटलेज. पृष्ठ संख्या — 58–63 एवं 146–153.
7. आहूजा, राम. (2000). *"भारतीय समाज"*. रावत पब्लिकेशन्स. पृष्ठ संख्या — 210–218.
8. आर्य, जियालाल. (2011). *"दलित समाज : आज की चुनौतियाँ"*. प्रकाशन संस्थान. पृष्ठ संख्या — 64–70.
9. माहला, इन्दु. (2014). *"दलित समाज : सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक विश्लेषण"*. नेशनल बुक ट्रस्ट. पृष्ठ संख्या — 93–95.
10. खान, मोहम्मद कामरान. (2015). *"राजस्थान में राज्य राजनीति : एक विश्लेषण"*. राजनीति विज्ञान विभाग (शोध पत्र). पृष्ठ संख्या — 12–19.
11. भंडारी, विजय. (2023). *"राजस्थान की राजनीति : सामंतवाद से जातिवाद के भंवर में"*. वाणी प्रकाशन.
12. गुप्ता, केशव सिंह., ओझा, जय किशन., एवं व्यास, गोपाल. (2025). *"राजस्थान की राजनीति : इतिहास, व्यवस्थाएँ, चुनौतियाँ एवं उभरते आयाम"*. यूनिक ट्रेडर्स, जयपुर. पृष्ठ संख्या — 91–96.
13. भारती, सत्येंद्र कुमार. (2021). *"दलित समाज और वर्तमान सामाजिक-राजनीतिक परिदृश्य : दशा एवं दिशा"*. आयुष्मान पब्लिकेशन हाउस. पृष्ठ संख्या — 88–96.
14. गौतम, रूपचंद. (2012). *"दलित राजनीति : उद्भव और विकास"*. श्री नटराज प्रकाशन. पृष्ठ संख्या — 21–24.
15. शर्मा, पी. डी. (2019). *"भारत में सामाजिक न्याय एवं संवैधानिक प्रावधान"*. डायमंड बुक्स. पृष्ठ संख्या — 40–44.
16. डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, भारत सरकार. (2024). *"डॉ. भीमराव अम्बेडकर : लेखन एवं भाषण"*. डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, भारत सरकार. पृष्ठ संख्या — 233–239.
17. भारत निर्वाचन आयोग. (2003, 2008, 2013, 2018, 2023). *"राजस्थान विधानसभा निर्वाचन परिणाम"*. भारत निर्वाचन आयोग.
18. जनगणना निदेशालय, भारत सरकार. (2011). *"जनगणना रिपोर्ट : अनुसूचित जाति जनसंख्या आँकड़े"*. भारत सरकार.

❑❑❑